ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 136-138**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

पर्यावरण सुरक्षा के लिए महिलाओं का संघर्ष

डॉ० अनामिका कुमारी
ग्राम–चन्दौरा,पो०–वैना , थाना–काको, जहानाबाद, (बिहार) भारत

Received-24.04.2025, Revised-01.05.2025, Accepted-06.05.2025 E-mail : anamika291990@gmail.com

सारांशः आठवें दशक के अंत में भारत में पर्यावरण की स्थिति पर जारी दूसरी नागरिक रपट (सीएसई रिपोर्ट) इंगित करती है कि संभवतः ग्रामीण निर्धन स्त्रियों को छोड़कर कोई अन्य समूह पर्यावरण के विनाश से इतना प्रभावित नहीं है । उनके प्रत्येक दिन की शुरुआत सूर्योदय के साथ ही ईंधन, चारा तथा पानी की तलाश यात्रा से होती है। इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि स्त्रियाँ बूढ़ी, जवान या गर्भवती हैं; रोजमर्रा की दुष्कर घरेलू जरूरतें उन्हें पूरी ही करनी पड़ती हैं । वानस्पतिक स्थितियाँ जैसे–जैसे बिगड़ती जाती हैं, इन गरीब महिलाओं की ईंधन तलाश यात्रा और अधिक लंबी तथा थकाऊ होती जाती है। गरीबी और पर्यावरणीय विनाश में जकड़ा इन गरीब ग्रामीण महिलाओं की मेहनत की दाद देनी होगी।[1]

कुंजीभूत शब्द– पर्यावरण सुरक्षा, महिलाओं का संघर्ष, रोजमर्रा, दुष्कर, घरेलू जरूरतें, थकाऊ, वानस्पतिक रूप, नहर व्यवस्था

भारत सरकार ने सन् 1952 में ही पर्यावरण को वानस्पतिक रूप से संतुलित करने के उद्देश्य से भारत के भौगोलिक भू–भाग के 33 प्रतिशत क्षेत्र में वन लगाने का लक्ष्य रखा था।[2] हाल में ही सातवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारंभ में सरकार ने इसे दोहराते हुए कहा रू श्देश के भौगोलिक भू–भाग के 33 प्रतिशत क्षेत्र में वन लगाने के कार्य को उच्च प्राथमिकता दी जाएगी, जो कि वर्तमान में मात्र 23 प्रतिशत है । जिन क्षेत्रों में अभी तक यह लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सका है, उनमें वृक्षारोपण कार्यक्रम को सघन बनाया जाएगा...[3] दूसरे शब्दों में, यह लक्ष्य कभी प्राप्त नहीं किया जा सका।

वर्तमान में भारत कुल वर्षा का दसवाँ हिस्सा ही उपयोग करता है, बड़े क्षेत्रों में जल सारणी घटी है, उच्च तकनीकवाली परियोजनाएँ जैसे – बाँध, जलाशय एवं नहर व्यवस्था – जिस पर सरकार ने अधिक बल दिया है – भी पर्याप्त सिंचाई या बाढ़ एवं सूखे की स्थिति जो कि भारत में गरीबों को हर साल प्रभावित करती है, निपटने में कारगर साबित नहीं हुई है ।

इसके परिणामस्वरूप स्त्रियों की स्थिति और अधिक दयनीय हुई है। ग्रामीण स्त्रियों को ईंधन, चारा और पानी की खोज में अधिक समय लगाकर ज्यादा दूर तक भटकना पड़ता है। कई बार तो इन्हें 2 से 8 किलोमीटर तक पैदल चलना पड़ता है, जिससे उन्हें न केवल मजदूरी के लिए कम समय मिलता है, बल्कि प्रतिदिन सामान्यतया 14–15 घंटे काम करना पड़ता है।

काम के बोझ का इतना भारी दबाव स्वास्थ्य पर स्वाभाविक रूप से घातक असर डालता है। इसके साथ ही तंग कमरों में खराब स्टोव पर खाना बनाने के परिणामस्वरूप स्त्रियों को अनेक बीमारियाँ लग जाती हैं। गरीबी की दशा में ईंधन की कमी अक्सर स्त्रियों को शीघ्र खाना बनाने के लिए मजबूर करती है – अस्वास्थ्यकर एवं कच्चा भोजन – स्त्रियों तथा उनके परिवार दोनों की सेहत खराब करने में सहायक हैं ।

इन्हीं उत्पीड़नात्मक खामियों के परिणामस्वरूप चिपको तथा अचिपको आंदोलनों का आविर्भाव हुआ। सुरक्षित तथा बुद्धिमत्तापूर्ण पर्यावरण के लिए संघर्ष का भारत में लंबा इतिहास रहा है। इनमें सर्वाधिक ख्याति प्राप्त हैं, तिलरी तथा टेहरी गढ़वाल के ग्रामीण जिन्होंने सन् 1930 में टिहरी के राजा द्वारा बनाए गए वन कानून के विरोध में धरना दिया। हालाँकि राजा द्वारा चलाए गए दमनचक्र के चलते अनेक लोगों की मृत्यु हो गई तथा कुछ घायल हुए, फिर भी उन्हें वनोपज के उनके पारंपरिक अधिकार को प्राप्त करने में सफलता मिली। हालाँकि चिपको आंदोलन का सूत्रपात जानेमाने पर्यावरणविद् सुंदरलाल बहुगुणा एवं चंडीप्रसाद भट्ट ने किया था परंतु स्त्रियों ने इसे अपना आंदोलन मानते हुए मोर्चा खोला।

चिपको आंदोलन का नामकरण हिंदी भाषा के शब्द श्चिपकोश के आधार पर हुआ, जिसका अर्थ है चिपक जाना। पेड़ों को गिरने या कटने से बचाने के लिए लोग पेड़ों से चिपक जाते थे । चिपको का वास्तविक इतिहास इससे भिन्न है। दूसरी नागरिक रिपोर्ट के अनुसार, यह आंदोलन सन् 1973 में एक सुबह तब शुरू हुआ जब चमोली जिले के सुदूर पहाड़ी कस्बे गोपेश्वर में इलाहाबाद की खेल सामान बनानेवाली फैक्ट्री के लोग देवदार के दस वृक्ष काटने के उद्देश्य से पहुँचे। शुरू में गाँववालों ने उनसे अनुरोध किया कि वे पेड़ न काटें, परंतु जब ठेकेदार अड़े रहे तो, ग्रामीणों ने चिह्नित वृक्षों का घेराव कर लिया तथा उनसे चिपक गए। पराजित ठेकेदारों को विवश होकर वापस जाना पड़ा। इसके कुछ सप्ताह बाद इन्हीं ठेकेदारों ने रामपुर फाट नामक गाँव में पेड़ काटने की कोशिश की, परंतु चंडीप्रसाद भट्ट के नेतृत्व में ग्रामीणों ने वहाँ पहुँच कर उनकी कोशिश को एक बार फिर विफल कर दिया ।

इस आंदोलन में स्त्रियों का प्रवेश एक वर्ष बाद सन् 1974 में हुआ। जोशीमठ से लगभग 65 किलोमीटर दूर स्थित रेनी गाँव के लोगों ने सुना कि उनके पास वाला जंगल नीलाम होने जा रहा है। चंडीप्रसाद भट्ट उन दिनों उस क्षेत्र का दौरा कर रहे थे । पता चलते ही वे रेनी गाँव पहुँचे और ग्रामीणों को गोपेश्वर में मिली चिपको की सफलता से अवगत कराया ।

बहरहाल, पुरुषों ने सबसे पहले इस कार्रवाई के प्रति कस्बे में मौजूद अधिकारियों से विरोध दर्ज कराने का निर्णय लिया । जिस समय वे लोग विरोध प्रदर्शन कर रहे थे, ठेकेदार अपना सारा ध्यान वृक्षों को शीघ्रातिशीघ्र गिराने में लगाए हुए था। कस्बे की महिलाओं को हालाँकि चंडीप्रसाद भट्ट तथा गाँव के पुरुषों ने स्त्रियों को औपचारिक रूप से इस बैठक में शामिल नहीं किया था फिर भी उन्हें कमोबेश इसकी जानकारी अवश्य थी। ठेकेदारों द्वारा पेड़ काटे जाते देखकर स्त्रियों ने स्वतंत्र कार्रवाई करने का फैसला किया। 50 वर्षीया विधवा गौरा देवी के नेतृत्व में स्त्रियों ने अपने गाँव के पीछे स्थित जंगल को जानेवाला मार्ग अवरुद्ध कर दिया । रास्ता जाम किए हुए स्त्रियाँ गा रही थीं रू

यह जंगल हमारा मायका है,
हम अपनी पूरी ताकत से इसे बचाएँगी,
और ठेकेदार के लोग वापस जाने के लिए विवश हो गए।

सन् 1975 में स्त्रियों ने एक बार फिर गोपेश्वर के निकटवर्ती गाँव में वृक्षों से चिपक कर उनका कटान रोका। इसे आगे बढ़ाते हुए उन्होंने कुछ सरकारी आवासों का घेराव किया क्योंकि वहाँ पर ईंधन के लिए नए वृक्षों को काटा जानेवाला था। घेराव तभी समाप्त हुआ जब जिलाधिकारी ने उन्हें इन वृक्षों की सुरक्षा का आश्वासन दिया।

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

कुछ ही वर्षों में चिपको आंदोलन समस्त चमोली जिले के साथ–साथ टिहरी गढ़वाल के कुछ क्षेत्रों में भी फैल गया जिसके अग्रणी मोर्चे पर महिलाएँ थीं। इस आंदोलन में स्त्रियों के प्रवेश के साथ ही उन्होंने विरोध दर्ज कराने के एक से बढ़कर एक नायाब तरीके खोज लिए। मिसाल के तौर पर, हेनवाल घाटी में स्त्रियों ने अनानास के वृक्षों की खुदाई के विरोध में धरना दिया तथा पेड़ों को लगे श्घावों को मिट्टी तथा छालों से भर दिया। वृक्षों की रक्षा तथा उनके घावों पर मरहम लगाने के लिए किए गए प्रत्येक धरने ने स्त्रियों को प्रकृति के अधिक निकट खड़ा कर दिया और उनमें यह विश्वास पैदा हुआ कि ये प्राकृतिक स्रोत उनके श्अपनेश हैं तथा इनका शोषण एवं विनाश के बजाय इनकी सुरक्षा तथा संरक्षण किया जाना चाहिए ।

आंदोलन के प्रसार के साथ ही महिलाओं ने संगठित होने तथा संघर्ष को तेज करने की जरूरत महसूस की। श्री चंडीप्रसाद भट्ट के ग्राम स्वराज्य मंडल की सहायता से अनेक गाँवों में महिला मंगल दल की स्थापना की गई। इनमें से अनेक ने जंगलों तथा खेतों में होनेवाली गतिविधियों का नियंत्रण तथा निर्णय का अधिकार प्राप्त करने का दावा किया। इस क्षेत्र में श्रम का विभाजन इस प्रकार किया गया था कि पुरुषों पर पशुओं की तथा स्त्रियों पर खेत में काम करने की जिम्मेदारी थी। रेनी तथा आसपास के गाँवों में फसलों की सुरक्षा को लेकर दल की सदस्यों तथा पुरुष – प्रभावित पंचायत में विवाद शुरू हो गया। पशुओं को चराते समय पुरुष खेतों से आदतन घास काट लेते। इस बीच जानवर फसलों को कुचल डालते या चर लेते। दल ने फसलों की सुरक्षा के लिए खेतों के इर्दगिर्द दीवार बनाने का निर्णय लिया। क्षुब्ध पुरुषों ने इस मामले को लेकर पंचायत की बैठक बुलाई। पंचायत ने दल की इस हिमाकत पर गुस्से का इजहार किया तथा कहा कि ऐसे मामलों का निर्णय केवल वही कर सकते थे । बहरहाल, स्त्रियों ने कहा कि चूँकि खेतों की देखभाल उनके (स्त्रियों) जिम्मे है इसलिए खेतों या फसलों के बारे में सिर्फ वही फैसला करने की हकदार हैं। पंचायत–दल के एक अन्य झगड़े का उल्लेख करते हुए सीएसई रिपोर्ट में कहा गया कि :

एक गाँव में स्त्रियों द्वारा तैयार किए गए घास के मैदान (चरागाह) से घास के विभाजन को लेकर महिलाओं की सरपंच से लड़ाई हो गई। सरपंच के परिवार की एक महिला ने महिला मंगल दल की इजाजत लिए बिना घास उठाकर ले गई । सामान्यतया घास ले जाने के लिए दल प्रतिदिन एक घर का नाम पुकारता है ताकि घास का बराबर बँटवारा सुनिश्चित किया जा सके । गाँव की स्त्रियों ने बिना बारी के घास ले जाने के लिए सरपंच का सख्ती से विरोध किया। बदले में सरपंच ने दल के खिलाफ मुकदमा ठोक दिया। जिला मजिस्ट्रेट को महिलाओं की ओर से किए गए सामूहिक विरोध को देखते हुए मुकदमा निरस्त करना पड़ा..[4]

यह कहने की जरूरत नहीं कि कपुरूष इन कार्रवाइयों को पसंद नहीं करते थे। गोपा जोशी के अनुसार, रैनी गाँव के पुरूषों ने स्त्रियों को प्रताड़ित करना शुरू कर दिया :गौरा देवी अपने इरादे के प्रति दृढ़ थी। ठेकेदार ने अपने आदमियों को जंगल में जाने देने के लिए गौरा देवी को रिश्वत देने की कोशिश की। जब उसने ठेकेदार के प्रस्ताव को ठुकरा दिया तो वन विभाग के कर्मचारियों ने पुलिस बुलाने की धमकी दी। ठेकेदार ने कुछ ग्रामीणों के साथ मिलकर गौरादेवी की गिरफ्तारी से संबंधित लोकगीत तैयार किया... वे लोग सारी रात यह लोकगीत गाते रहे तथा एक साथ मिलकर नाचते रहे...

गाँव को काली सूची में डलवाने के लिए चिपको महिला कार्यकर्ताओं पर आरोप लगाया जाने लगा। गाँव के पुरुष कहते हैं कि चूँकि स्त्रियों के व्यवहार के कारण गाँव को काली सूची में डाल दिया गया है, अब जवानों को, जिनमें से अधिसंख्य फौज में हैं, कहीं नौकरी नहीं मिलेगी और गाँव में नमक और मिट्टी के तेल जैसी आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति भी नहीं की जाएगी... कार्यकर्ताओं को शांति का दुश्मन बनाया जाने लगा..[5]

कुछ समय पूर्व हुई एक कांफ्रेंस में प्रस्तुत अपने निबंध में चंडीप्रसाद भट्ट ने स्वीकार किया कि सन् 1975 का रेनी गाँव का स्त्री कार्यकर्तावाद उनके लिए आँख खोलनेवाला था क्योंकि इसके बाद ही उन्होंने महसूस करना शुरू किया कि गढ़वाल में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के लिए जंगल कितने अधिक महत्त्वपूर्ण थे। इसके पश्चात उन्होंने तथा बहुगुणा, दोनों ने स्त्रियों के साथ मिलकर काफी उल्लेखनीय कार्य किए। भट्ट की अध्यक्षता वाला दसौली ग्राम स्वराज्य वन विकास शिविरों का नियमित आयोजन करता है जिसमें स्त्रियाँ भी बैठकों की अध्यक्षता करती हैं। वे स्त्रियों को बायोगैस प्लांट तथा धुआँरहित स्टोव प्राप्त करने में सहायता करते रहे क्योंकि ये ऐसी चीजें थीं जिनकी अधिकाधिक स्त्रियाँ माँग कर रही थीं।

चिपको आंदोलन के प्रारंभ एवं विकास की भाँति ही उत्तराखंड में सुरक्षित पर्यावरण के लिए भी आंदोलन विकसित हुआ। ऐसी उम्मीद की गई कि दो आंदोलन समान संस्कृति और समस्याओं वाले दो क्षेत्रों को एकजुट कर सकते हैं और किसी हद तक अल्मोड़ा के वानिकी आंदोलन और गढ़वाल के शराब विरोधी आंदोलन (जिसकी चर्चा हम बाद में करेंगे) के माध्यम से ऐसा हुआ भी। बहरहाल गढ़वाल की स्त्रियों का चिपको आंदोलन जहाँ लकड़ी की ठेकेदारी के विरुद्ध किया गया वहीं अल्मोड़ा में उनका आंदोलन खनन के विरोध में था। सोमेश्वर घाटी का खीराकोट गाँव कोसी नदी के ऊपर तथा पहाड़ियों की निचली सतह पर बसा हुआ है। गाँव में लगभग 150 परिवारों की आबादी है। गाँव के ऊपर गाँव का जंगल है तथा उसके ऊपर सरकारी आरक्षित जंगल है। कई वर्षों से खीराकोट से पुरुषों का सघन पलायन हुआ है। इस क्षेत्र की एक सक्रिय कार्यकर्ता राधा भट्ट के अनुसार कोई 500 पुरुषों में से गाँव में अब 25–30 ही रह गए हैं। बहरहाल इससे महिलाओं को अपनी तरह से संगठित होने का साधन मिल गया, कई वर्षों पूर्व कानपुर के एक ठेकेदार ने सरकार से खड़िया – मिट्टी की खुदाई का पट्टा लिया था। पत्थर को सड़क तक लाने के लिए उसे खीराकोट के बाहरी छोर से उन रास्तों से होकर गुजरना पड़ता था जिनका इस्तेमाल ग्रामीण अपने खेतों की जुताई के लिए, पानी, ईंधन या चारा लाने के लिए करते थे । देवकी जैन के अनुसार : ठेकेदार पहले इस भार को मजदूरों से दुलवाता था । उसको यह व्यापार बहुत महँगा लगा, इसलिए उसने पावर मिल लगाने का निर्णय किया । मिल की क्षमता अधिक होने के कारण खान से ज्यादा बड़ी मात्रा में पत्थर मँगाने की आवश्यकता महसूस की गई। इसके चलते मालवाही पशु के रूप में गधों का इस्तेमाल किया गया । खान से सड़क तक आने–जानेवाले गधों के इस कारवाँ ने उन तंग गलियारों पर कब्जा कर लिया जिससे होकर स्थानीय आबादी, खासतौर से स्त्रियाँ अपने खेतों में आती–जाती थीं । ...[6]

स्त्रियों ने पाया कि उनके द्वारा इस्तेमाल किए जानेवाले जंगल में जानेवाले मार्ग पर न केवल टट्टुओं की आवाजाही से भीड़ बढ़ गई है, बल्कि जंगल में जाने के लिए उनका रास्ता भी अवरुद्ध हो गया है। इसके साथ ही उन्होंने यह भी देखा कि खान का कचरा उनके संरक्षित वन को नष्ट कर रहा है। वर्षा के दिनों में खदान की यह धूल बहकर खेतों में पहुँच जाती है तथा उनमें पत्थर की तरह जम जाती है जिससे खेतों की जुताई असंभव हो जाती है। प्रारंभ में स्त्रियों ने गाँव के पुरुषों से अनुरोध किया कि वे ठेकेदार से बात करें । जब उन्होंने देखा कि ठेकेदार उनकी बात सुनने को तैयार नहीं है तो उन्होंने खानों में काम करना बंद कर दिया और अपने खेतों की सुरक्षा के लिए उनके इर्दगिर्द दीवारें बना दीं। ठेकेदार ने प्रतिक्रियास्वरूप उनके खिलाफ अदालतों में मुकदमें दायर

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

कर दिए तथा अनेक लोगों को डरा–धमकाकर कमजोर कर दिया गया। बहरहाल, स्त्रियों ने अदालती लड़ाई लड़ने के लिए पुरुषों पर दबाव डाला तथा इस काम के लिए प्रत्येक परिवार से धन एकत्र किया। इस बीच सीधी कार्रवाई के तहत उन्होंने गलियारों को काटकर सँकरा कर दिया ताकि मालवाही गधे उन रास्तों पर ठीक से आ–जा न सकें। खान के ठेकेदार ने इसे देखते हुए स्त्रियों पर मुकदमा ठोक दिया जिसकी प्रतिक्रिया में स्त्रियों ने अवरोध को और अधिक सघन करते हुए भौतिक रूप से फुटपाथों पर कब्जा कर लिया। ठेकेदार एक बार फिर अदालत गया। स्त्रियों ने भी खान में काम बंद करने के लिए पुरुषों पर दबाव डाला। एक स्त्री ने कहारू श्हम खान श्रमिकों को पकड़कर बैठा लेंगे और उन्हें खान में खुदाई नहीं करने देंगे।श दूसरी स्त्री ने कहारू श्हमने मर्दों से कहा कि तुम पहले हमें मारकर पहाड़ की चोटियों पर दफना दो तभी पहाड़ को हाथ लगा सकते हो ।श तीसरी महिला ने अपने उद्‌गार इन शब्दों में व्यक्त किए रू श्उनकी खुदाई हमारी जिंदगी तबाह कर रही है, हमारे बच्चों के भविष्य से खिलवाड़ कर रही हम उन्हें कैसे खुदाई करने दें ?

ठेकेदार ने स्त्रियों को कुचलने के लिए अनेक उपक्रम किए। उसने स्त्रियाँ को डराने के लिए भाड़े के गुंडे बुलाए तथा उनके घरों पर पत्थर बरसाए। एक पहाड़ी सक्रिय महिला कार्यकर्ता के पुत्र की कपड़े की दुकान में आग लगा दी गई। जब ठेकेदार के सभी हथकंडे विफल हो गए तो उसने स्त्रियों को खानों में हिस्सा देने के नाम पर रिश्वत देने की कोशिश की। इसके बाद उसने बाहर से मजदूर बुलाए परंतु स्त्रियों ने उन मजदूरों को काम नहीं करने दिया। इन मजदूरों में ज्यादातर नेपाली थे। इस बीच अदालतों में स्त्रियों की लड़ाई जारी रही । लगभग दो वर्षों के बाद जिला मजिस्ट्रेट ने गाँव का दौरा करने और होनेवाले नुकसान को अपनी आँखों से देखने की रजामंदी दी। मौका–मुआयना करने के बाद जिलाधिकारी इतने द्रवित हुए कि उन्होंने फौरन मुकदमा निरस्त करने की सिफारिश कर दी और स्त्रियाँ मुकदमा जीत गईं। सन् 1982 के आखिरी दिनों में औपचारिक रूप से अंततः बंद कर दी गईं ।

खीराकोट की स्त्रियाँ नुकसान की भरपाई करने में जुट गईं। उन्होंने गड्ढों को भरकर खेत के चारों ओर सुरक्षा दीवार बना दी ताकि पहाड़ से बहकर आनेवाला कचरा उनके खेतों को क्षतिग्रस्त न कर सके। पंचायत की जंगल भूमि पर देवदार के पेड़ लगा दिए, परंतु उनका सबसे बड़ा पुरस्कार है इस अंचल के पिथौरागढ़ और झिरौली क्षेत्र में होनेवाला आंदोलन जो कि खीराकोट में हुए धरने की चिंगारी से भड़का ।[7]

एक अन्य घटना में खीराकोट की स्त्रियों ने महसूस किया कि वे स्वयं अपने पर्यावरण को क्षति पहुँचा रही हैं क्योंकि उन्होंने तथा आसपास के गाँवों की स्त्रियों ने गाँव के जंगल में चीड़ के पेड़ों की छँटाई कर दी है । इसका नतीजा यह हुआ कि गाँव विश्व पर्यावरण दिवस पर सकलाना गढ़वाल में सन् 1986 में जनसभ में चीड़ के पत्तों की कमी हो गई जिसका प्रयोग वे जानवरों के बिछौने के रूप में करती थीं। राधा भट्ट के अनुसार : उन्होंने (स्त्रियों ने आपस में बैठकर तय किया कि ईंधन के लिए तोड़ी जानेवाली चीड़ की टहनियों को वे खुद तथा अन्य गाँवों की स्त्रियाँ भविष्य में नहीं तोड़ेंगी ताकि उनके गाँव के जंगल की रक्षा की जा सके। उनका मानना था कि अगर चीड़ के पेड़ बड़े हो जाएँगे तो उनकी पत्तियाँ बड़ी आसानी से उनके घरों के आसपास ही उपलब्ध होंगी तथा अगर चीड़ के पेड़ों की ठीक तरह से रक्षा की गई तो ईंधन के लिए लकड़ी भी पेड़ों को बिना नष्ट किए मिल जाएगी। उन्होंने अपनी मंशा पूरे गाँव में जाहिर कर दी तथा स्त्रियाँ इसके लिए राजी भी हो गईं। इसके लिए उन्हें महिलाओं की कोई औपचारिक बैठक भी नहीं बुलानी पड़ी। यह काम उन्होंने जलाशयों से पानी लेने के लिए आते–जाते समय किया ।

इस प्रकार चार वर्षों के अनवरत प्रयासों तथा स्त्रियों के सामूहिक नेतृत्व के परिणामस्वरूप खीराकोट गाँव के ऊपर चीड़ का एक सुंदर जंगल देखा जा सकता है। जंगल ने स्त्रियों को अपने जानवरों के नीचे बिछाने के लिए सूखी पत्तियाँ उपलब्ध कराना रंभ कर दिया है। यह नेतृत्व आता है। सन् 1983 के पहले जनसभा को संबोधित करती एक महिला कार्यकर्ता थकने के बजाय अपेक्षाकृत अधिक उत्साही नज़र महीने में उन्होंने मर्दों को भी अपने प्रयासों में शामिल कर लिया। जंगल के चौकीदार को वेतन देने के लिए गाँव के प्रत्येक घर ने एक रुपया महिना देना मंजूर कर लिया स्त्रियाँ यह धन इकट्ठा करके गाँव के जंगल के युवा चौकीदार के हवाले कर देतीं।[8]

सन्दर्भ ग्रंथ सूची–

1. दि सेकंड सिटीजन्स रिपोर्ट ऑन दि एनवायरमेंट, दिल्ली, पर्यावरण अध्ययन केंद्र, 1987 तद्‌नुसार सीएसई रिपोर्ट ।
2. बी०बी० बोहरा की पुस्तक श्इदि ग्रीनिंग ऑफ इंडियाश्, दिल्ली, इनटैक्ट एनवायरमेंट सीरीज, 1985, पृ०–01.
3. दि एप्रोच टू दि सेवंथ प्लानश्श से उद्धृत, पूर्वोक्त–पृष्ठ–01.
4. सीएसई रिपोर्ट, पूर्वोक्त– पृष्ठ–183–184.
5. मधु किश्वर तथा रूथ वनीता की पुस्तक श्श्स्लैंडर्ड बाय दि कम्यूनिटी इन रिटर्नश्श में गोपा जोशी, पूर्वोक्त, पृष्ठ–125.
6. देवकी जैन, मानुषी अंके 6, 1980.
7. सीएसई रिपोर्ट, पूर्वोक्त–पृष्ठ–178.
8. राधा भट्ट पूर्वोक्त।

*****